Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 08, Issue 01, June 2021
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021

हिमाचल की देव परम्परा में अवनद्ध वाद्यों की भूमिका

Manoj Verma[1], Dr. Rajeev Sharma[2]

Research Scholar, Department of Music, Himachal Pradesh University, Shimla
Assistant Professor, Department of Music, Himachal Pradesh University, Shimla

सार संक्षेपिका

सम्पूर्ण जगत के रचयिता उस ईश्वर ने हिमाचल को मनमोहक परिदृश्यों, प्राकृतिक सौन्दर्य, अनुपम छटा, खूबसूरत वादियों एवं बर्फीली चोटियों के रूप में अपार सौन्दर्य से नवाजा है जहाँ की संस्कृति एवं सभ्यता सम्पूर्ण भारत में विशिष्टता के लिए तो प्रसिद्ध है ही, साथ में 'देव परम्परा' के लिए भी विख्यात है। हिमाचल की 'देव परम्परा' या 'देव संस्कृति' का उल्लेख जहाँ भी आता है 'साज–बाज' व 'ढोल–ढमाके' का जिक्र आवश्यक हो जाता है। ढोल–नगाड़ों की गूंज के अभाव में हिमाचल की सुन्दरता फीकी सी प्रतीत होती है और देव परम्परा का तो प्राण वास ही 'वाद्य वृन्द' में है जिसके अन्तर्गत 'अवनद्ध वाद्य' सदियों से एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते आए है।देव कारीज (कार्य) में शहनाई, रणसिंगा इत्यादि वाद्यों का वादन तो कभी–कबार ही किया जाता है लेकिन ढोल–नगाड़ों का वादन नित्य अनिवार्य रूप से किया जाता है। भोर की 'बेल' से लेकर रात्रि की 'तपोल','देव उत्सवों' से लेकर 'देव आयोजन,'देव भ्रमण' से लेकर 'देव यात्रा', 'देव नृत्य' से लेकर 'आरती' तक के सभी प्रकार के देव कार्यों में 'अनवद्ध वाद्यों का वादन' देवता साहब की शान में चार चाँद लगा देता है। देवपरम्परा में अवनद्ध वाद्यों की महत्ता को देखते हुए यह शोध कार्य किया गया है।

बीज शब्दः हिमाचल, देव परम्परा, अवनद्ध वाद्य।

भूमिका

हिमाचल के स्मरण से ही आंखों के सामने बर्फ की ऊँची–ऊँची चोटियों के लुभावने दृश्य प्रकट हो जाते हैं जिससे निकलने वाली निर्मल व पावन जलधारा करोड़ो लोगों की प्यास को शांत करने के साथ–साथ यहाँ आने वाले सैलानियों एवं पर्यटकों के हृदय को प्रसन्नता व आत्मिक शांति से भर देते है। हिमाचलकी संस्कृति सभ्यता, रीतियाँ, परम्पराएं व प्राचीन मान्यताएं सम्पूर्ण विश्व में हिमाचल को एक अलग पहचान प्रदान करती है। हिमाचल की भूमि को देव–भूमि का दर्जा दिया गया हैजिससे यहाँ के जनमानस की देव–परम्परा में प्रगाढ़ आस्था का अनुमान स्वतः ही हो जाता है। हिमाचल की संस्कृति अगर आज भी अपने पुरातन स्वरूप में खड़ी है तो उसका कारण मात्र देव परम्परा ही है जो कहीं न कहीं यहाँ के लोगों के मन में आस्थास्वरूप पुरातन सभ्यता व संस्कृति के दिये जलाये हुए है। आज भी पूरे साज–बाज एवं विधि–विधान के साथ देवता साहब की पूजा–अर्चना, मेले–खेले, साज़ा–बेज़ा, तीज–त्यौहार व देव कार्यों को निभाने की परमपरा का अनुसरण करने वाला हिमाचल अपनी पुरातन संस्कृति को विभिन्न रीतियों के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी संजोता आ रहा है।

हिमाचल की देव परम्परा

देव शब्द से अभिप्राय 'दिव्य शरीर धारी', 'अमर प्राणी' या 'अमर पुण्य आत्मा'से है। एक ऐसा व्यक्ति या आत्मा जो पालक है,संहारक है, देने वाला है, पुण्यता के कारण जगत में पूजा जाता है, चंहुओर जिसकी कीर्ति की गाथाओं व यश का गान किया जाता 'देव' कहलाता है। देवता सकारात्मकता का प्रतीक है जो कि दातृत्व शक्ति से युक्त है। जो अपनी शक्ति द्वारा समस्त ब्रह्माण्ड का भला करता है।

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 08, Issue 01, June 2021
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021

विश्व की समस्त संस्कृतियाँ देवत्व से निहित है जिसकी मानता किसी न किसी रूप में अवश्य की जाती है। हिमाचल में देवपरम्परा यहाँ की संस्कृति का प्राण वास है। यहाँ की भूमि देवों द्वारा सिंचित व उपजित भूमि है जहाँ प्रत्येक कार्य का प्रारम्भ व समापन देव आदेश पर ही निर्भर करता है। साल के बारह महीनों में यहाँ पर अनेक उत्सव जैसे शांत, जागरा, भूण्डा, साज़ा, बेज़ा, खोडा, पांजोई, शोणयालटी इत्यादि मनाने की प्रथा का विधान है जिसमें देव परम्परा का जीता–जागता स्वरूप देखने को मिलता है। यहाँ का प्रत्येक उत्सव देवी–देवता से जुड़ा है जिसमें देवता से परामर्श व आज्ञा लेना अति अनिवार्य होती है। यहाँ के सभी गावों में कुल देवता या ठारी माता के मन्दिर प्रतिष्ठित है जहाँ पर नित्य पूजा–पाठ व साज़े–बेज़े के दिन होने वाले यज्ञ व हवन इत्यादि हिमाचली लोक जीवन में देव–परम्परा के प्रति गहरी आस्था के जीते–जागते चित्र प्रस्तुत करते है। देवता को प्रसन्न करने हेतु यहाँ के मन्दिरों में भूंडा, जातर, खलात्तर इत्यादि उत्सवों का आयोजन किया जाता है जहाँ देवता की पालकी को जन साधारण के मध्य लाया जाता है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति देवता साहब को नमन करता है तथा आर्शीवाद ग्रहण करता है। हिमाचल का सम्पूर्ण भू–क्षेत्र किसी न किसी देवता की रियासत माना जाता है जहाँ उस देवता की मानता व पूजा का विधान अनिवार्य रूप से प्रचलित है। उदाहरणस्वरूप शिमला जिला का रोहडू, जुब्बल व कोटखाई का कुछ क्षेत्र महासू देवता के अधीन, टिक्कर, नावर इत्यादि इलाका गोली नाग व बारह बीश (रोहडू) का इलाका देवता शालू महाराज के अधीन माना जाता है। इसके आलावा प्रत्येक गांव के कुछ परिवारों में कुल देव जैसे नारसिंह इत्यादि देवों की आराधना के साथ–साथ पुरानें बुजुर्गों की प्रतीकात्मक मूर्ति का पूजन भी अनिवार्य रूप से किया जाता है। हिमाचल में देव–आस्था का स्वरूप इतना गहरा है कि देव–इच्छा के विरूद्ध जाना पाप समझा जाता है। अभिप्राय यह है कि जन्म से लेकर मृत्यु तक 'एक हिमाचली' देव परम्परा से घिरा रहता है जो कि हिमाचल की संस्कृति को एक अलग आयाम प्रदान करता है।

देव स्वरूप

जगत में यूँ तो ईश्वर के प्रतीकात्मक रूप में विभिन्न देव मूर्तियों की आराधना का विधान प्रचलित है लेकिन हिमाचल में विभिन्न दैवीय शक्तियों के प्रतीक के रूप में कलात्मक मोहरों की पूजा का विधान है। देव परम्परा में ये कलात्मक मोहरे प्राण वास है यूँ तो ईश्वर या 'देव' सर्वत्र है जिनकी आराधना 'ध्यान' द्वारा की जा सकती है लेकिन मोहरे 'विशिष्ट' देव को एक 'विशिष्ट रूप' प्रदान करते हैं जिसकी पूजा अर्चना व धूप–धनैरा सम्पूर्ण लोक द्वारा चढ़ाया जाता है। ये कलात्मक मोहरें ही देवता का स्वरूप होते हैं जिन्हें मन्दिरों में स्थापित किया जाता है। देव–यात्रा व अन्य उत्सवों में जब देवता साहब शिरकत करते हैं तो एक सुसज्जित पालकी में सवार होकर जनता के समक्ष पूरे साज–बाज व लाव–लश्कर के साथ निकलते हैं। देवता की पालकी में देव मोहरों को विधि–विधान के साथ स्थापित किया जाता है, भली प्रकार श्रृंगार के उपरान्त चार लोग देवता की इस सुन्दर पालकी को मन्दिर से उठाकर लोगों के समक्ष लेकर जाते हैं। देवता के ये मोहरे अमूमन सोने, अष्टधातु तथा चांदी के बने होते हैं। देवता साहब के साथ उनकी सोने की छड़ी व सोने का छत्तर उनकी यात्रा में ऐसे सुशोभित होता है जैसे चांदनी रात में चांद। कभी–कबार दूर तक की यात्रा में देवता की छोटी पालकी जिसे 'जमान्टू' कहा जाता है, में ही देवता शिरकत करते हैं क्योंकि बड़ी पालकी को यहाँ पहुँचाना सम्भव नहीं होता। जहाँ से भी देवता की पालकी निकलती है लोग नतमस्तक व आध्यात्मिक भावना से भावविभोर हो देवता साहब को भेटा व धूप–पाची अर्पित करते हैं। देवता को सम्मान में 'देवता साहब' कहकर सम्बोधित करना शिमला

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 08, Issue 01, June 2021
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021

जनपद की पुरातन रीत है। देवता साहब अपने 'गुर' के माध्यम से जनता के समक्ष प्रकट होकर अपने विचारों को रखते हैं जिसे बझेरना, ओतरना व तैरी कहा जाता है। अपने इष्ट देव के दर्शनार्थ लोग दूर–दूर के शहरों से भी अपने गांव वापिस आकर देवता के चरणों में नतमस्तक हो आर्शीवाद ग्रहण करते हैं। यदि आज भी हिमाचल में वो पुरातन सभ्यता संस्कृति व रीतियाँ जिंदा है तो इसका श्रेय कहीं न कहीं देव परम्परा को अवश्य जाता है।

अवनद्ध वाद्यों का उद्भव एवं विकास

वाद्य शब्द से अभिप्राय 'बोलने' से है अर्थात वाद्य से अभिप्राय ऐसे यन्त्र से है जो बोलता है। किसी संगीतात्मक या संगीतोपयोगी ध्वनि की उत्पादक वस्तु को वाद्य की संज्ञा दी जा सकती है। यदि वाद्यों के उदभव एवं विकास की बात की जाए तो वाद्यों का विकास धर्म से अनुप्राणित है जिसका सम्बन्ध प्राचीन काल से ही देवीय शक्तियों से रहा है। शुभंकर कृत संगीत दामोदरानुसार तत वाद्य देवताओं से सुषिर वाद्य गन्धर्वों से अवनद्ध वाद्य राक्षसों से तथा घन वाद्य किन्नरों से सम्बन्धित थे जिन्हें श्रीकृष्ण धरती पर लाए थे। वेदों और उपनिषदों में भी वाद्यों का सम्बन्ध सामगान से जोड़ा गया है जो कि पूर्णतः मार्गी संगीत अर्थात दैवीय संगीत का भाग था। इसके पश्चात् ही वाद्य लौकिक जगत में प्रचलित हुए। यदि वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाए तो जिस प्रकार जीवन की प्रत्येक गतिविधि के विकास में मानव ने प्रकृति को अपना प्रेरणास्त्रोत माना, उसी प्रकार वाद्यों के उद्भव में भी प्रकृति ने अहम भूमिका अदा की। प्रकृति की कर्णप्रिय ध्वनियों ने मनुष्य को आकर्षित किया और मनुष्य ने कण्ठ तथा विभिन्न उपकरणों के आघात द्वारा उसकी नकल करने की कोशिश की व सफलता के पश्चात् वाद्यों की रूप रेखा का जन्म हुआ।

यदि अवनद्ध वाद्यों के उदभव की बात की जाये तो यह माना जाता है कि मानव आदिकाल में हाथ द्वारा अपने शरीर के किसी भी भाग पर आघात से ताली बजाकर लय रूपों की प्रस्थापना कर लेता था, इन्हीं तालीयों की प्रेरणा से अवनद्ध वाद्यों का क्रमशः विकास हो सका। अवनद्ध वाद्यों का सर्वप्रथम जिक्र वेदों में 'दुन्दुभी' के रूप में मिलता है जो बैल के चमड़े का बना वाद्य था। इसके पश्चात् ज्यों–ज्यों मानव विकास करता गया नए–नए अवनद्ध वाद्य प्रचार में आते गए। ऐसे वाद्य जिन्हें चमड़े से मढ़ा जाता था अवनद्ध वाद्य कहलाते थे। आज के अवनद्ध वाद्यों में तबला, ढोलक, ढोल, नगारा इत्यादि लोकप्रिय वाद्य है।

हिमाचल के अवनद्ध वाद्य

हिमाचल प्रदेश में अवनद्ध वाद्यों के इतिहास को दैवीय शक्ति से जोड़ा गया है। ऐसे बहुत सारी गाथाऐं प्रचार में है। जिसमें अवनद्ध वाद्यों का जिक्र मिलता है।

''ज़ोडीऐ नौबदा बाज़े रे, ज़ोडिऐ नौबदा बाज़े

सुनुऐ किंदरे लाऐ रे, सुनुऐ किंदरे लाऐ।''

उपरोक्त पद शिमला जनपद में प्रचलित लोक रामायण से लिए गऐ हैं जिसमें 'नौबद ताल' जो कि नगारा वाद्य पर बजाई जाती है, का जिक्र किया गया है। तंत्री वाद्य वीणा जिसे 'किंदरी' कहा गया है, का जिक्र भी किया गया है। हिमाचल प्रदेश के अवनद्ध वाद्यों में गुजु, बाम, ढोल, नगारा, ढोलकी, टमक, ढोलक, खंजरी, डफ, इत्यादि उल्लेखनीय है जिनका सम्बन्ध प्राचीन काल से ही देवीय परम्परा से रहा है। बाम व नगारा जैसे वाद्यों की ध्वनि अति गम्भीर होने के कारण देवालयों में पूजा अर्चना व राजा, महाराजा द्वारा विभिन्न उदघोषणाओं में

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 08, Issue 01, June 2021
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021

इन्हें प्रयोग में लाया जाता था। 'गुजु' वाद्य को शिवजी के डमरू के अनुरूप देखा जाता है। पुराने जमाने में शाही वाद्य, सोना, चांदी, पीतल, लकड़ी इत्यादि के बने होते थे लेकिन आज के समय में लकड़ी व पीतल के वाद्य ही प्रचार में है जिनका वादन करने हेतु लकड़ी की डन्डियाँ जिन्हें 'डौंडी' कहा जाता है, का प्रयोग किया जाता है।

देव परम्परा में अवनद्ध वाद्यों की भूमिका

देव परम्परा में कुछेक शब्दों का श्रवण व बखान बारम्बार मिलता है जिनमें एक के 'साज–बाज'। यह साज–बाज देवता व देव परम्परा की शान, देवता का गरूर, साधारण जनों की आस्था का प्रतीक व देवता के लाव–लश्कर की भव्यता का प्रतीक है। साज–बाज से अभिप्राय 'देवता साहब' के साथ चलने वाले 'बजंतरियों' जिन्हें 'बाज़गी' या 'ढ़ाकी' भी कहा जाता है, की टोली से है जो कि अपने वाद्य यन्त्रों के साथ 'धूम–धड़ाके' से देवता साहब के आगे–आगे चलते है। इन वाद्य यन्त्रों में अवनद्ध वाद्यों की गूंज एक उदभुद दृश्य प्रस्तुत करती है जिसकी ताल में मानव तो मानव देवता भी झूम उठते है व पूरा 'देव लश्कर' देवता साहब की जयकार के साथ आगे बढ़ता है। इसके अतिरिक्त प्रतिदिन नित्य पूजा से लेकर देवता साहब को समर्पित प्रत्येक तीज त्यौहार, रीतियों, उत्सवों, परम्पराओं, देव यात्राओं, देव गीतों इत्यादि में अवनद्ध वाद्यों का वादन अहम व अति अनिवार्य रूप में किया जाता है। केवल शोक की स्थिति में इन वाद्यों का वादन कुछ समय के लिए निषेध कर दिया जाता है।

1. हूमक्री (टीका पाची)

हूमक्री से अभिप्राय हवन से है। देवता साहब के प्रातः स्नान के पश्चात सर्वप्रथम पुजारी द्वारा देवता क माथे पर कुंगु (सिंदूर), चावल व घी का तिलक लगाया जाता है व एक विशेष प्रकार का घास जिसे 'कुबिश' कहा जाता है, देवता साहब के कान के पीछे लगाया जाता है जिसे 'पाची' कहा जाता है। इसके पश्चात देवता साहब की पूजा के लिए शुद्ध पानी लाया जाता है। जिस कलश में यह पानी लाया जाता है उसे 'झारी' कहा जाता है जो कि चांदी की बनी होती है। इसके पश्चात देवता साहब की वस्तुएँ जैसे घंटी, झारी, शंख इत्यादि की पूजा के पश्चात 'घूड़स' या 'धनैरा' (धूप) देने के लिए जैसे ही 'पंचपात्र' में 'घी' डाला जाता है ढोल, नगारा इत्यादि वाद्यों पर 'हूमक्री' ताल बजाई जाती है। यह ताल मध्य लय से शुरू होकर अन्त में अतिद्रुत लय में सम्पन्न होती है।

2. कांसी(हवन)

पंचपात्र की पूजा के पश्चात पुजारी खड़े होकर देवता साहब के रथ (पालकी) की पूजा करते है जिस दौरान अवनद्ध वाद्यों पर 'कांसी' ताल बजाई जाती है। इसे 'हवन' भी कहा जाता है। 'कांसी' को वादक विभिन्न प्रकार की लयकारियों के साथ प्रस्तुत करता है। पुजारी देवता साहब के 'दौरे' पर जाने से पूर्व यह पूजा करता है।

3. तपोल

तपोल ताल (देवता साहब के सम्मुख) प्रातः काल में दो खण्डों में बजाई जाती है एक जब पुजारी देवता साहब का मुख प्रक्षालन करते हैं औरदूसरा तब जब पुजारी धूप–धनैरा देने हेतु मन्दिर से बाहर आते हैं।तपोल को प्रातः व सायंकालीन पूजा का अन्तिम खण्ड भी माना जाता है। इस दौरान पुजारी कालियों (काली माँ के 108 रूप) व अन्य देवी–देवों की पूजा–अराधना करता है। तपोल ताल धीमी लय से शुरू होती है और नगारा वाद्य के ठेके के साथ सम्पन्न होती है।

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 08, Issue 01, June 2021
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021

4. झाड़ा

जब देवता साहब अपने स्थान से यात्रा या प्रजा के समक्ष दर्शनार्थ हेतु मन्दिर (देऊठी) से बाहर आते है तब अवनद्ध वाद्यों पर 'झाड़ा' वादन किया जाता है। इस दौरान देवता साहब की पालकी को चार लोगों द्वारा मन्दिर से बाहर प्रांगण में लाया जाता है। जहाँ 'प्रजा' या 'देवता का लाव–लश्कर' उनकी प्रतीक्षा कर रहा होता है। जैसे ही देवता मन्दिर की सीढ़ियों से प्रांगण में लाए जाते है, सम्पूर्ण प्रजा आस्था स्वरूप उनको नमन करती है और बजन्तरियों के दल द्वारा 'झाड़ा वादन' की क्रिया का प्रारम्भ किया जाता है। झाड़ा ताल के वादन से समस्त जनता आगाह हो जाती है कि महाराज पधार रहे है।

5. मील

जब भी देवता साहब अपनी देऊठी से निकलकर अपनी प्रजा व साधारण जन के मध्य दर्शनार्थ उपस्थित होते हैं तब देवता साहब के 'तूरी' (बजन्तरी) नगारा, ढोल, करणाल, शहनाई, भाणा इत्यादि वाद्यों के साथ खूब शान व जोश में 'मील' ताल का वादन करते है। इस ताल की थाप मुख्यतः ढोल वाद्य पर बजाई जाती है व अन्य वाद्यों से ताल का अनुसरण किया जाता है। इस दौरान देवता साहब शीश नवा कर अपनी प्रजा के चक्कर काटते है, तब प्रजा भी हाथ जोड़कर नमन करती है व देवता साहब से अपने 'कारे–माशे' (यात्रा) पर जाने का आवेदन करती है।

6. हंडावण या हंडाऊण (चलना)

हंडावण शब्द से अभिप्रायः चलने से है। जब भी देवता साहब अपने स्थान से चलना या प्रस्थान करना प्रारम्भ करते है, बजन्तरियों द्वारा पूरे वाद्य–वृन्द के साथ 'हंडैऊण' या हंडाऊण ताल को प्रस्तुत किया जाता है जिसमें 'सन्हाईये' के द्वारा शहनाई वाद्य पर अति सुन्दर रचनाएं प्रस्तुत की जाती है। इस दौरान सबसे पहले बजन्तरियों का दल चलता है। उसके पीछे देवता साहब का लाव–लश्कर 'छड़ी–छत्तर' के साथ पूरी शानो–शौकत में देवता का अनुसरण करता हुआ चलता है।

7. तैरी

तैरी का सम्बन्ध देवता के वार्तालाप से है। देवता साहब अपने 'माली' (गुर) के माध्यम से जब भी संदेश देते है तब तैरी ताल का वादन देवता साहब के बजन्तरियों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इस दौरान देवता की पालकी हिलने लगती है व भागकर भीड़ में अपने माली को ढूंढ कर, उसके माध्यम से अपनी बात को जनता के समक्ष रखती है। इस दौरान बीच–बीच में 'तैरी' बजाई जाती है व बीच–बीच में देवता साहब अपने माली के माध्यम से संदेश देते है।

8. जोड़ी–भरत, जोड़ी बारत या जड़ी भरत

जब भी देवता साहब मन्दिर से बाहर आते है तब वह चतुषष्ठी योगिनी–मां काली का आवाहन करते है। मां काली जिनके 108 रूप माने गए है हवा स्वरूप है, जो कि पहाड़ी परम्परानुसार कांडे–डाण्डे (ऊंची चोटियाँ) में निवास करती है। देवता साहब के आवाहन पर बजन्तरी 'जोड़ी–भरत का बाज' बजाना शुरू करते है। यह बाज सुनते ही काली स्वरूप शक्तियाँ देवता साहब के शीश में प्रवेश करती है व देवता साहब को शक्ति प्रदान करती है। जड़ी–भरत को 'काली का बाज' भी कहा जाता है क्योंकि जड़ी–भरत बजते ही काली शक्ति जागृत हो

Hill Quest: A Multidisciplinary, National Peer-Reviewed Journal
ISSN 2454-3144 | Volume 08, Issue 01, June 2021
http://hillquest.pratibha-spandan.org
© The Author(s) 2021

जाती है जिस कारण देवता की पालकी का वजन कम या ज्यादा हो जाता है। देव–परम्परा में जड़ी–भरत को अत्यन्त प्रभावशाली ताल माना गया है जिसका वादन मुख्यतः ढोल, नगारा व बाम इत्यादि वाद्यों के साथ किया जयाता है। जड़ी भरत ताल को मुख्य बजन्तरी द्वारा विभिन्न मुद्राओं व लयकारियों के साथ प्रस्तुत किया जाता है। इसे सुनकर देवता साहब की पालकी हिलने लगती है व 'बाज़गी' की तरफ अपना शीश नवाती (झुकाती) है।

निष्कर्ष

देव परम्परा में अवनद्ध वाद्यों का स्थान सर्वोच्च स्थान है। मन्दिर में दैनिक पूजा से लेकर, यात्राओं, मेलों व आयोजनों इत्यादि में अवनद्ध वाद्य पर विशिष्ट तालों का वादन अनिवार्य रूप से किया जाना, इन वाद्यों की महत्ता को उजागर करता है। देव लाव–लश्कर जहाँ भी जाता है देवता के बजन्तरी उनके पहले–पहले व देवता सदैव उनके पीछे ही चलते है जो कि देव परम्परा में वाद्यों की भूमिका का जीता–जागता उदाहरण है। देवता की शानौ–शौकत का प्रतीक ही वाद्य–वृन्द है और अवनद्ध वाद्य देव परम्परा में सर्वोच्च भूमिका निभाते है। निष्कर्ष स्वरूप यह कहना तर्क संगत होगा कि जहाँ एक ओर देव परम्परा समूचे हिमाचल की संस्कृति को अपने आप में समेटे हुए है वहीं दूसरी ओर अवनद्ध वाद्यों में देव परम्परा का प्राण वास है।

संदर्भ

आचार्य, हरिराम. (1998). श्री शुभंकर विरचित संगीत दामोदर, पब्लिकेशन, जयपुर
कौशल, डॉ० ललित कुमार. (2013). हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में वाद्यात्मक भावाभिव्यक्ति, कनिष्क पब्लिशर्स
कुमार, अशोक. (2007). संगीत और संवाद, कनिष्का पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स नई दिल्ली
ठाकुर, डॉ० सूरत. (2006). हिमाचली देव संस्कृति मंदिर मेले त्यौहार, एच०जी० पब्लिकेशन नई दिल्ली
दिलैक, गोपाल. (2013). विशाल हिमाचल, युग पब्लिकेशन्स, शिमला
शर्मा, रूप. (2012). हिम दर्पण, करन प्रकाशन मंडी
सिंह, डॉ. भवानी. (2013). हिमाचल की लोक गाथाएं, एकीकृत हिमालय अध्ययन संस्थान, हिप्रविवि
Krishna Swami, S. (2017). Musical Instruments of India, Publication Division